

श्री दशलक्षण धर्म पूजन

~ ब्र.रवींद्र जी 'आत्मन्'

(गीतिका)

उत्तम क्षमादिक धर्म आतम का सहज निजभाव है।

सुख शान्ति का है हेतु जग में, मुक्ति का सु-उपाव है।

है मूल सम्यग्दर्श, निज में लीनतामय ये धरम।

पूजूँ सु-भाऊँ भावना, हों पूर्ण दशलक्षण धरम।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

छन्द-रेखता

सहज प्रासुक सु निर्मल जल, करो प्रक्षाल मिथ्यामल।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माँहि दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-त्याग-आकिंचन्य-ब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय

जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्त भावों का ले चन्दन, सहज भवताप निकंदन।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखय पद कारणे अक्षय, आत्म पद का करो आश्रय।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निजमाँहि दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन श्रद्धा सजाओ सब, काम दुःखमय नशाओ अब।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माँहि दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सन्तोषमय नैवेद्य, क्षुधादिक का न हो कुछ खेद।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माँहि दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उजालो ज्ञान का दीपक, महातम मोह का नाश।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज मांही दृष्टि धर।।

ॐ हीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि शोधक जले तप की, भस्म हो कर्म की प्रकृति।

धर्म दशलक्षण सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ हीं श्री उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय अष्टकर्म विध्वंसनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं फल पुण्य के चाहो, मोक्षफल भी सहज पाओ।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माँहि दृष्टि धर।।

ॐ हीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

समर्पित अर्घ्य अविकारी, होओ साक्षात् शिवचारी।

धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माँहि दृष्टि धर।।

ॐ हीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश धर्मों को अर्घ्य

(चौपाई)

निज अन्तर्मुख दृष्टि होवे, परमानन्दमय वृत्ति होवे।

तहँ अनिष्ट भासे नहीं कोई, क्रोध बैर उत्पन्न न होई।।

उत्तम क्षमा सहज अविकारी, वर्ते निज पर को हितकारी।

तत्त्वाभ्यास करो मनमाँही, पर का दोष लखो कछु नाहीं।।

जैसा कर्म उदय में आवे, वैसे ही संयोग सु पावे।

तातेँ कर्म बंध के कारण, क्रोधादिक का करो निवारण।।

ॐ हीं श्री उत्तम क्षमा धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान करि देखो भाई! मिथ्या मान महा दुखदाई।

मानी के सब बैरी होवें, मानी को सब नीचा जोवें।।

जल ज्यों पत्थर में न समाये, त्यों मानी निज बोध न पावे।

स्वाभाविक निज प्रभु देखो, ज्ञानी के जीवन को देखो।।

अध्रुव वस्तु का मान सु त्यागो, विनयवंत हो निज में पागो।

उत्तम मार्दव आनन्द दाता, पूजो धरो सहज हो ज्ञाता।।

ॐ हीं श्रीउत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सहज सरल निज भाव पिछानो, गुप्त पाप को माया जानो।
नहीं छिपावो ताहि मिटावो, उत्तम आर्जव चित में लावो।।
क्यों समझे ठगता औरों को, पाप बंध कर ठगता निज को।
उत्तम जिनशासन को भजकर, दुखमय छल प्रपंच को तजकर।।

कोई बहाना नहीं बनाओ, रत्नत्रय पथ पर बढ जाओ।
सरल स्वभावी होकर भ्राता, उत्तम आर्जव पूजो ज्ञाता।।
ॐ हौं श्री उत्तम आर्जव धर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

लोभ लाभ का कारण नाहीं, व्यर्थ क्लेश करता मन माहीं।
लोभी विषयी महामलीना, दर-दर ठोकर खावे दीना।।
ज्ञेय लुब्ध अज्ञानी प्राणी, स्वानुभूति बिन दुःखी अज्ञानी।
जिन उपदेश भाग्य तें पाय, अनुभव रस में तृप्त रहाय।।
ध्याओ आत्मा परम पवित्रा, नाशे आश्रव अति अपवित्रा।
निर्लोभी हो पाप नशाय, उत्तम शौच जजो सुखदाय।।

ॐ हौं श्री उत्तम शौच धर्मांगाय अयं नि. स्वाहा।

उत्तम सत्य धर्म परधाना, सत्य समझ बिन नहीं कल्याणा।

तीर्थ प्रवर्ते सत्य वचन से, होय प्रतिष्ठा सत्य धर्म से।।

सत्य धर्म सबको सुखदाई, झूठ दुःखमय दुर्गति दाई।

बोलो हित मित प्रिय सत्य वयना, अथवा शान्त मौन ही रहना।।

वस्तुस्वरूप यथार्थ पियानो, करके स्वानुभूति श्रद्धानो।

तज परभाव रमो निज ही में, प्रगटे सत्य धर्म जीवन में।।

ॐ हीं श्रीउत्तमसत्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अहो अतीन्द्रिय आनन्द आवे, विषयों में नहीं चित्त भ्रमावे।

तज प्रमाद सब हिंसा टारी, होओ उत्तम संयम धारी।।

करि विचार देखो मन माँही, भोगों में सुख किंचित् नाहीं।

हस्ति मीन अलि पतंग हिरन सम, विषयों में दुख लहें मूढजन।।

हो विरक्त सब पाप नशावें, धरि संयम ज्ञानी सुख पावें।

उत्तम संयम शिवपद दाता, पूजो भाओ धारो ज्ञाता।।

ॐ हीं श्रीउत्तमसंयमधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तप निज में ही हो विश्रान्त, इच्छाएं हो जाएँ शांत।
सब ही सुख की इच्छा करें, आत्मबोध बिन सुख नहीं लहें।।
ज्यों ज्यों भोग संयोग लहाय, आशा तृष्णा बढ़ती जाए।
इच्छा पूरी कबहुँ न होय, करो निरोध सहज तप होय।।
बारह भेद व्यवहार कहाय, निश्चय तप सब कर्म नशाय।
अपनी-अपनी शक्ति प्रमान, उत्तम तप धारो बुधिवान
ॐ ह्रीं श्रीं उत्तमतपोधर्मज्ञाय अध्व्य नि. स्वाहा।

दुखदायक विभाव सब त्याग, आत्म धर्म में धरि अनुराग।
चार प्रकार दान शुभ देय, त्रिविधि पात्र को दे यश लेय।।
औषधि अभय आहार सु जान, ज्ञान दान सबसे प्रधान।
ज्ञान बिना भ्रमता तिहुँ लोक, आत्मज्ञान से पावे मोक्ष।।
निज को निज पर को पर जान, ज्ञानमयी कर प्रत्याख्यान।
सर्व दान दे हो निग्रंथ, उत्तम त्याग धरे सो सन्त।।
ॐ ह्रीं श्रीउत्तमत्यागधर्माज्ञाय अयं नि. स्वाहा।

हूँ मैं एक शुद्ध चिन्मात्र, अन्य न मम परमाणु मात्र।
मोहादिक औपाधिक भाव, मेरे नहीं मैं ज्ञान स्वभाव।।
मैं स्वभाव से आनंद रूप, द्विविधि परिग्रह दुःख स्वरूप।
परिग्रह त्याग आकिंचन्य धर्म, धारि मुनीश्वर नाशें कर्म।।
श्रावक भी परिणाम कराहिं, परिग्रह में किञ्चित सुख नाहिं।

यों उत्तम आकिंचन सार, पूजो धारो भव्य संभार।।

ॐ हीं श्रीउत्तमआकिंचन्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य अविकार, पूजो धर्म शिरोमणि सार।
कामभाव दुर्गति को मूल, भव-भव में उपजावे शूल।।

लहे न चैन कर कृत निंद्य, कामासक्त बढावे बंध।
तातें शील बाढ नौ धार, अपनो ब्रह्म स्वरूप निहार।।
त्यागो दुखमय इन्द्रिय भोग, पाओ ज्ञानानन्द मनोग।

जयवन्तो ब्रह्मचर्य अनूप, धारे सो होवे शिवभूप।।

ॐ ही श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

मोह क्षोभ बिन परिणति, ही दशलक्षण धर्म।

भेदज्ञान करि धारिये, तजि क्रोधादि अधर्म।

(तर्ज-हे दीन बन्धु श्री पति)

दशलाक्षणीक धर्म सहज सुःखकार है।

आनन्दमयी यह धर्म अहो मुक्ति द्वार है।।

दशलाक्षणीक धर्म ही नाशे विकार है।

जिनवर प्रणीत धर्म करे भव से पार है।।

दशलाक्षणीक धर्म कल्पवृक्ष से अधिक।

समतामयी यह धर्म चिंतामणि से अधिक।।

दशलाक्षणीक धर्म धरे सहज ही ज्ञाता।

बिन याचना बिन कामना सब सुख प्रदाता।।

दशलाक्षणीक धर्म क्रोध मान से रहित।

मंगलमयी यह धर्म माया लोभ से रहित ।
ये ही सनातन धर्म सत्य रूप है पवित्र ।
संयम स्वरूप अभय रूप भोगों से विरक्त ।।
तप त्याग रूप धर्म ये आनन्द स्वरूप है ।
परिग्रह प्रपंच शून्य, ब्रह्मचर्य रूप है ।।
दशलाक्षणीक धर्म ज्ञानमय स्वभाव है ।
वर्ते निजाश्रय से सहज मेटे विभाव है ।।
दशलाक्षणीक धर्म मैत्री भाव का सेतु ।
अहिंसामई यह धर्म विश्व शान्ति का हेतु ।।
आओ भजो यह धर्म तत्त्वज्ञान पूर्वक ।
सब द्वन्द्व फन्द छोड़कर स्वलक्ष्य पूर्वक ।।
यह धर्म है वस्तु स्वभाव सम्प्रदाय ना ।
यह धर्म है अनादि निधन भेदभाव ना ।।
निष्काम भाव से सहज यह भावना वर्ते ।
दशलाक्षणीक धर्म नित जयवन्त प्रवर्ते ।।

(छन्द-धत्ता)

दशलक्षण रूपं धर्म अनूपं, धरे परम आनन्द से।

दुर्भाव नशावे सब सुख पावे, छूटे भव दुख द्वन्द से।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-त्याग-आकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्य इतिदशलक्षणधर्माय

जयमालापूरुर्घ्यम निर्वपामीति स्वाहा।।

(दोहा)

दशलक्षण हैं धर्म के, धर्म नहीं दशरूप।

मोह क्षोभ बिन धर्म है, सहजहिं साम्य स्वरूप।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)